Nowgong Girls' College | Department Dashboard | Publications | शोध आलेख प्रकाशन हेतु - bisi | नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के | Your work in IQAC//NGC

naagfani.com/wp-content/uploads/2022/04/नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के-लिए-मार्च-2022.pdf

नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के-लिए-मार्च-2022.pdf 1 / 401 67%

1

2

3

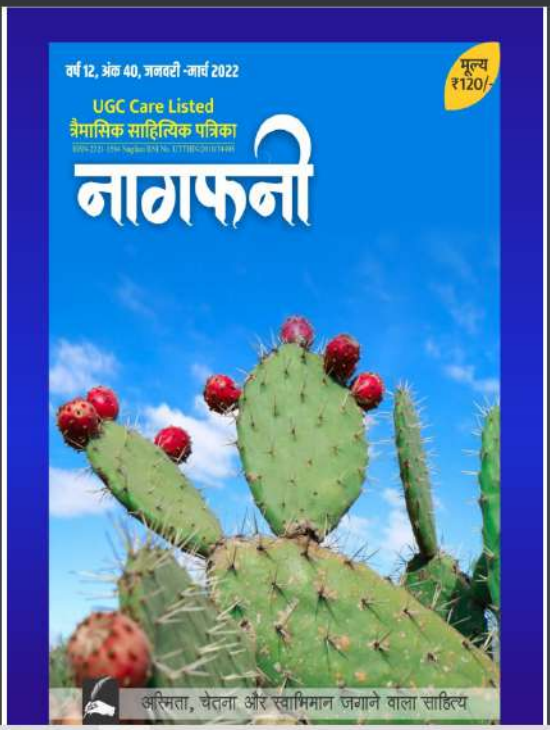

Type here to search 12°C Clear ENG 17:47 21-12-2022

Nowgong Girls' College | Department Dashboard | Publications | शोध आलेख प्रकाशन हेतु - bis | नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के | Your work in IQAC//NGC
naagfani.com/wp-content/uploads/2022/04/नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के-लिए-मार्च-2022.pdf
नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के-लिए-मार्च-2022.pdf 4 / 401 125%

4. स्त्री लेखन का नया प्रतिमानः स्त्री-भाषा-डॉ.यमुना प्रसाद रतूड़ी 77-79
5. 'रेत' उपन्यास में चित्रित स्त्री-डॉ. शीतल गायकवाड 80-81
6. कृष्णा अग्निहोत्री की 'और...और...औरत' आत्मकथा में नारी विमर्श-राकेश भील 82-83
7. स्त्री विमर्श के दायरे में 'बारबाला' का अनुशीलन-डॉ.मीना सुतवणी 83-86
8. नन्द चतुर्वेदी की कविता में स्त्री चित्रण-डॉ.विदुषी आमेटा/संगीता भारद्वाज 87-93
9. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण स्त्री जीवन का परिदृश्य :'बेनीमाधो तिवारी की पतोह'के विशेष संदर्भ में- बेबी विश्वकर्मा 94-96
10.वर्तमान समय में नारी की स्थिति-डॉ.पूजा शर्मा 97-98
11.अनामिका की कविता में स्त्री पक्षधरता-डॉ.उषस पी.एस. 99-101
12.'थेरीगाथा' में चित्रित स्त्री-जीवन की वैयक्तिक समस्याएँ- संजय यादव 101-102
13.शिवमूर्ति की कहानियों में स्त्री स्वर की अभिव्यक्ति-चंद्रावती 103-105
14.भगवानदास मोरवाल के उपन्यास 'वंचना'में व्यक्त नारी विचार-परेश सननसे/संजय कुमार शर्मा 106-107

Type here to search 12°C Clear ENG 17:47 21-12-2022

naagfani.com/wp-content/uploads/2022/04/नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के-लिए-मार्च-2022.pdf
नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के-लिए-मार्च-2022.pdf   101 / 401   80%

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण स्त्री जीवन का परिदृश्य

('बेनीमाधो तिवारी की पतोह' उपन्यास के विशेष संदर्भ में)

-बेबी विश्वकर्मा
सहायक प्राध्यापक,
नगाँव गर्ल्स कॉलेज,
असम,मो.9366905919

स्त्री अपने स्वतंत्रता के लिए लंबे समय से संघर्षरत है। नैतिकता, मर्यादा, इज्जत आदि के नाम पर वह सदा छली गई है। लेकिन ये बंधन केवल स्त्री पर लगे है, पुरुष पर नहीं। सत्ता की दोहरी मानदंडो की कपट को अब स्त्री समझने लगी है। स्त्री सबलीकरण, स्त्री-स्वतंत्रता के नारे आज हर जगह दिख जाते है। अब तक 21 वीं सदी के दो दशक गुजर चुके हैं, स्त्री की स्थिति में थोड़ी-बहुत सुधार जरूर हुई है लेकिन उसका सफर अभी भी मंजिल से कोसो दूर है। स्त्री तब भी समाज की दोहरेपन की शिकार थी, आज भी है। फर्क इतना है कि अब स्त्री के पारंपरिक विशेषताओं में कुछ आधुनिक विशेषताएँ भी जुड़ गए हैं। अब स्त्री का स्मार्ट, शिक्षित होना जरूरी है लेकिन उस पर नियंत्रण अभी भी पुरुषवादी समाज का है, वह कामकाजी हो सकती है लेकिन घरेलू और पतिव्रता होना उसके चरित्र की शुचिता और आदर्श पत्नी, बहू और माँ होने का प्रमाण-पत्र है। दुनिया की आधी आबादी अभी भी इन शर्तों पर घुट-घुट कर या फिर इसे ही अपना भाग्य-सौभाग्य मानकर जी रही है। मधुकर सिंह का उपन्यास 'बेनीमाधो तिवारी की पतोह' एक ऐसी ही स्त्री की गाथा है जिसके जीवन का कई दशक पितृसत्ता के पुरोधाओं से ग्रस्त वातावरण में बिना विरोध बीत जाती है। लेकिन हरिहर के प्रयास और ससुर बेनीमाधो तिवारी की स्वार्थसन्निहित प्रोत्साहन से विधवा पतोह के रंगहीन जीवन का नया रंगीन अध्याय प्रारम्भ होता है। सुनन्दा के मन में नव अंकुरित अस्तित्व की चेतना उसके पर लगे सपनों को आसमानी ऊंचाई देती है। तिवारी की पतोह ग्रेजुएट है लेकिन सुशिक्षित होकर भी घर के चारदीवार में कैद रहने के लिए अभिशप्त है। तिवारी जी उसे शहर में रखना नहीं चाहते, नौकरी नहीं करने देते, मनपसंद किताबें पढ़ने नहीं देते। निरंतर संघर्ष के लिए उसे गाँव में छोड़ दिया जाता है। ताकि उसके मन में भटकाव पैदा न हो सके। लेकिन जब अपनी सत्ता कायम करने का जुनून तिवारी पर सवार होता है तो अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए सुनन्दा को घर से बाहर जाने की छूट देते है। उसे आंगनवाड़ी सेविका बनाने की योजना करते है। सुनन्दा अपने जीवन में आए नए परिवर्तन को लेकर अत्यंत उत्साहित रहती है। वैचारिकता की नई दुनिया में वह चहकती हुई प्रवेश करती है। सुनन्दा का आत्मजागरण समूचे गाँव के कायापलट का कारण बनता है। सुनन्दा सालों से पिंजरे में कैद पक्षी को मिली मुक्ति की अधीर उड़ान भरती है। स्वत्वबोध की पहचान और अधिकारों का ज्ञान उसके व्यक्तित्व को साहसी और प्रखर बनाता है। कोई भी बाधा उसके परों में लगी मुक्ति की जद्दोजहद को रोकने का सामर्थ्य नहीं रखता। गाँववालों द्वारा दिये गए ताने, अपमान, रूकावटों को चीरती हुई वह अपना मुकाम हासिल करती है। आंगनवाड़ी की सेविका बनती है साथ ही ग्राम पंचायत की प्रथम महिला प्रमुख की कुर्सी साहस और ईमानदारी के साथ हासिल करती है। पुरुषवादी और जातिवादी व्यवस्था के आचार संहिता का अतिक्रमण कर 'युवनीति' के नाट्यमंडली में योगदान करती है तथा नाटकों के जरिए दुश्चक्रों का पर्दाफाश कर समाज में जागृति और समरसता लाने का भरसक प्रयास करती है।

हमारा समाज पुरुषसत्तात्मक है और स्त्री दोयम दर्जे की नागरिक। संसार के संसाधनों पर, यहाँ तक स्त्री पर भी मूल अधिकार पुरुष का है। चाहे वह पिता, भाई, पति, ससुर अथवा परिवार के वरिष्ठ व्यक्ति के रूप में हो। स्त्री को क्या कब और कितनी मात्रा में मिलेगी इसका निर्णय भी पुरुष लेता है। इसीलिए तो स्त्री स्वतंत्रता और अन्य अधिकारों को लेकर समाज में दोहरापन दिखता है। स्वतंत्रता की चाह रखनेवाली स्त्रियों के प्रति समाज में घृणा और अविश्वास भर दिया गया है। राजेंद्र यादव लिखते हैं- "वे कुलटा, कुलटा, छिनाल, रंडी, पतिता इत्यादि के नाम से सजा की अधिकारिणी हुई। इस स्वतंत्रता की सजा मौत होती है" हमारे समाज में पुरुष को श्रेष्ठ और स्त्री को इतर दर्जा दिया जाता है। वह चाहता है कि स्त्री निष्क्रिय रहें और उसके विचार भी। परिणामस्वरूप स्त्री और पुरुष के लिए दोहरे नियम बनाए गए। पुरुष एक से तीन-चार शादियाँ करने की छूट रखता है। पत्नी के जीते जी विवाह के वादों को ठुकराता है लेकिन पति के मृत्यु के बावजूद स्त्री को उन वादों का भार उठाना पड़ता है। पति नामक संरक्षण के छूटने के पश्चात यह मान लिया जाता है कि उस विधवा की कोई आशा-आकांक्षाएँ शेष नहीं रहेंगी। रूढ़िवादी नीति-नियम, ताने, अवज्ञा और अपमान उसके जीवन को दुर्वह कर देता है। किसी सामाजिक धार्मिक कार्यक्रम में उसकी भागीदारी को अपवित्र, अशुभ ठहराया जाता है। पुरुषवर्चस्ववादी समाज स्त्री जीवन की स्वाभाविक गति को रोकने की तमाम प्रपंच रचता है। सुनन्दा सोचती है - "विधवा होने के बाद उसके सारे सपने मर गए हैं या मार दिए गए हैं। कुछ पढ़ने की इच्छा भी होती तो वह जालिम ससुर इतना जालिम था कि शहर में अखबार तक देखने नहीं देता था। पढ़ने के लिए कुछ मांगने पर गीता रामायण सामने रख देता। उपन्यास कहानी में मन रमाती तो वहीं जालिम ससुर डांट देता कि यह सब पढ़ना तुम्हारे लिए जुर्म है... बहक नहीं जाओ इसीलिए अशिक्षा, बदहाली और भूख के बीच गाँव में डाल दिया गया।" भावना का जनना तो मनुष्य की सहज प्रवृत्ति है। तो फिर क्या किसी की साथ की चाह, किसी की प्रेम सहानुभूति की ललक केवल पुरुष मन की उपज हो सकती है? स्त्री मन की नहीं? लेकिन पुरुषोचित मूल्य, नैतिकता स्त्री से जड़-सम बनने की अपेक्षा रखती है। समाज जैसा कहे स्त्री ठीक उसी भांति यंत्रवत व्यवहार करती जाए। उपन्यासकार ने स्त्री-दमन की इस पहलू को मंदता से लेकिन बेहद सटीकता से प्रस्तुत किया है। वर्षों से अकेलेपन की बोझ ढोती सुनन्दा हरिहर के अप्रत्याशित प्रोत्साहन, प्रशंसा, सहानुभूति पाकर खिल उठती है। जैसे उसके बंजर जमीन पर अधीर अपेक्षित वर्षा की दो बूंदें अचानक टपक पड़ी हो - "बहू को चाहना शब्द बहुत मीठा लगा।...चुपचाप खड़ी होकर उसके शब्दों पर गौर कर रही थी। तिवारी जी नहीं होते तो पूछती उसमें और कौन-कौन-सी योग्यताएँ हैं।" सुनन्दा का यह

ISSN-2321-1504 Nagfani No. UTTHIN/2010/34408

Nowgong Girls' College | Department Dashboard | Publications | शोध आलेख प्रकाशन हेतु - bis | नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के | Your work in IQAC//NGC

naagfani.com/wp-content/uploads/2022/04/नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के-लिए-मार्च-2022.pdf

नागफनी-अंतिम-अंक-छपाई-के-लिए-मार्च-2022.pdf 102 / 401 80%

99 100 101 102

क्षणिक आकर्षण उसके जीवन का विरजापन और किसी अपने को संग पाने की चाह की उपज है। उसकी यह तलाश भूनेसर महतो में अपनी मंजिल पाती है। सुनन्दा विधवा है ऊपर से ब्राह्मण कन्या तो दूसरी ओर भूनेसर सवर्ण भी नहीं है। इन दोनों का वैवाहिक संबंध ब्राह्मणवादी और पुरुषवादी संकीर्णता से प्रदूषित समाज के सत्ता के लिए एक चुनौती है। इसीलिए उनको तोड़ने के लिए, कमजोर करने के लिए, समाज से बहिष्कृत करने के लिए अनेक प्रयास और प्रपंच किए जाते है। लेकिन व्यर्थता ही उनके हाथ लगता है। समाज के जिस अन्यायपूर्ण व्यवस्था को खत्म करने की जी-तोड़ प्रयास सुनन्दा और भूनेसर कर रहे है, उसमें बहिष्कृत होने का भय भला उन्हें किस प्रकार दुर्बल बना सकती है।

समय की गतिशीलता हमें अपने विचारों को भी प्रगतिशील बनाने की मांग करता है। एक समाज और देश सही मायने में तभी समर्थ सम्पन्न बनेगा जब उसकी स्त्रियाँ समाधिकार की अधिकारिणी होंगी। उपन्यासकार मधुकर सिंह इस बात को समझते हैं इसीलिए चर्चित उपन्यास के अनेक प्रसंगों में वे लैंगिक समानता की मांग रखते हैं जिसके तर्क में भारत के स्वर्णिम अतीत का (जिसके गौरव गान में अपरिमित साहित्य की रचना की जा चुकी है,)हवाला देते हैं। तिवारीपुर का ग्रामीण समाज पूरी तरह मध्यकालीन जड़ संस्कारों से ग्रस्त है। जातिगत भेद-भाव, स्त्री दमन, गरीबों का शोषण, अफसरशाहों का भ्रष्टाचार यहाँ चरमोत्कर्ष पर है। इसीलिए स्त्रियों का मर्दों के साथ बैठकर नाटक देखना गाँववालों के लिए मर्यादा नष्ट और धर्म भ्रष्ट करने के समान है। लेकिन सुनन्दा इसके विरुद्ध तर्क देती हुई कहती है- "भगत सिंह महान देशभक्त थे। उनसे नारी को शिक्षा मिलती है। औरतों को भी यह नाटक देखने की अनुमति होनी चाहिए। ...रानी लक्ष्मीबाई भी तो मेरी तरह विधवा बहू थी। उन्होंने अंग्रेजों के दाँत खट्टे कर दिए। समय बदल रहा है बाबूजी। औरत को साथ जोड़कर चलना होगा।"iv स्त्री की इच्छा-आकांक्षा, विचार और निर्णय सभी पर पुरुष एकाधिकार चाहता है। मान-मर्यादा, चरित्र और नैतिकता की कसौटी के कठघरे में स्त्री ही मुजरिम ठहराई जाती है। यह कितना हास्यास्पद लगता है कि गाँव का दागी गुंडा रंगीला जो खुद अव्वल दर्जे का लफंगा है, जिसके आशियाने में देह व्यापार, ताड़ीखाना, जुआ, ऐय्याशी जैसे कुकर्म हर शाम चलते रहते हैं, वह भरी सभा में स्त्रियों को नैतिकता की पाठ पढ़ाने की हिम्मत रखता है- "बंद करो यह नकसलाइट गाना?...गाँव की बहू-बेटियों का रास्ता खराब होगा? यही चोर-डाकू बनेंगे?"v लेकिन उसकी यह धमकी स्वत्व हासिल करने की राह पर निकल पड़ी स्त्रियों को पस्त नहीं कर पाता। हरिकिसुनी रंगीला सिंह के प्रत्युत्तर में कहती है - "हमारे जिन हाथों में सुहाग की चूड़ियाँ हैं, उन्हीं हाथों में हँसुआ-खुरपी भी रखते हैं।"

मधुकर सिंह ने चर्चित उपन्यास में स्त्री पात्रों के नामउद्घाटन में विशेष ध्यान दिया है। उपन्यास का नामकरण और स्त्री पात्रों के संबोधन स्त्री-अस्मिता से जुड़ी एक अहम बिन्दु पाठक के समक्ष लाती है। परंपरागत रूप से तय की गई स्त्रीत्व की अवधारणा परिवार को स्त्री का सर्वस्व मानती है। स्त्री जीवन की धुरी उसका परिवार है जिसके इर्द-गिर्द वह आजीवन खपती रहती है लेकिन विडम्बना यह है कि न वह घर-परिवार उसका अपना बन पाता है और न ही उसका पहचान अपना रह जाता है। जिस घर में वह जन्म लेती है, अपना मानकर उसे प्रेम से संवारती है वहाँ उसे 'पराया धन' कहा जाता है। शादी के बाद मायका पीछे छूट जाता है लेकिन ससुराल उसे पूरी तरह अपना नहीं पाता क्योंकि आखिर में वह घर उसका थोड़े न है उसके पति का है। जिसकी समृद्धि के लिए वह खुद को होम करती है वहाँ से उसे बात-बेबात पर घर से निकल जाने की, बेघर करने की धमकी दी जाती है। चर्चित उपन्यास में सुखदेव तिवारी की पतोह बासमती के साथ भी यही होता है। ससुरालवालों ने बासमती को अपने अधीन, अपने बेटे के अधीन रहनेवाली एक तुच्छ जीव से बढ़कर नहीं समझा। वरना जिसके साथ सालों एकसाथ एकछत के नीचे गुजारा वही परिवारवाले उसका नाम तक नहीं जानते। यह दरअसल उसके अस्तित्व को नकारना है। भला घर के वस्तुओं का नाम कौन जानता है? उनका तो बस उपयोग होता है और पुराने होने पर फेंक दिये जाते है। घर की तरह स्त्री का पहचान भी पराया होता है। वह पहचानी जाती भी है तो किसी और के सहारे, या तो किसी की माँ है, बहू है, बेटी है या पत्नी है। इन रिश्तों के बीच स्त्री की वैयक्तिकता दम तोड़ देती है। स्त्री का पहचान केवल उनके रिश्तें बनकर रह जाते है। चर्चित उपन्यास में स्त्री पात्रों का परिचय पाठकों से सर्वप्रथम किसी-न-किसी की पतोह के रूप में होती है। रेखांकन योग्य बात यह है कि जैसे ही पात्रों में आत्मजागरण की चेतना समाती है वे अपने नाम से संबोधित होती है जो उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व का परिचायक है। उन पर थोपी गई पुरुष आश्रित छवि का निषेध है। बेनीमाधो तिवारी द्वारा नाम पूछे जाने पर हरिकिसुनी कहती है- "ससुराल में बेटी का नाम नहीं होता। वह सिर्फ फलाना बहू या फलां की माय होती है। बाबा वैसे मैंने अपना नाम पहले ही बता दिया है- लगनराम की पतोह।" जब वह रंगीला सिंह के स्त्री विरोधी टिप्पणी का बाकायदा विरोध करने का साहस दिखाती है, उपन्यासकार उसके नाम का का खुलासा करते है- "वह कुदबुदाई, हरिकिसुनी"।

पुरुषवादी मानसिकता के शिकार लोगों के लिए स्त्री मात्र एक भोग्य वस्तु है जिसकी देह तो है पर चेतना नहीं। पटककर, गिराकर निर्मम छेड़छाड़ी करते हुए जिस तरह एक खिलौना के साथ खेला जाता है, पुरुष भी स्त्री के साथ ठीक उसी प्रकार का व्यवहार करता है। खिलौना यदि अत्यंत प्रिय हो तो कुछ समय तक मालिक का प्रेम पाता है लेकिन उसकी अंतिम नियति तो कूड़ेदान में फेंका जाना ही है। एक खराब हो चुके खिलौने की भांति समय आने पर स्त्री भी फेंकी जाती है। समाज के दृष्टि में स्त्री का देह सर्वोपरि है। उसका सर्वोत्तम अस्त्र उसका देह है जिसके सहारे वह पुरुष को लुभाती है। स्त्री मानस का अवमूल्यन तो होता रहता है परंतु स्त्री के देह पर भी उसका खुद का अधिकार नहीं होता। स्त्री देह जाति, धर्म, वंश, परिवार के सम्मान का प्रतीक है। स्त्री की पवित्रता पुरुष का अभिमान है। स्त्री देह पर लगा कलंक इन मर्यादाओं पर चोट पहुँचाता है। इसीलिए, पुरुष द्वारा बलात्कृत होने पर यह मान लिया जाता है कि स्त्री का सर्वस्व लूट गया। लेकिन यहाँ भी अपराधी स्त्री ही ठहराई जाती है। यह स्त्री की गलती थी कि उसने अपने कुल की मान-मर्यादा का खयाल नहीं रखा, ढंग के कपड़े नहीं पहने, अकेली बाहर निकली, अधिक मुसकुराई, जरूरत से ज्यादा वाचाल बनी, चंचलता दिखाई और पुरुष को लुभाया। पुरुष के तो फितरत में ही है बहकना, स्त्री को ही खुद को नियंत्रण में रखना चाहिए। बंधन में रहना चाहिए। इस तरह के भांति-भांति के बेतुके तर्क देकर अंत में सजा की अधिकारिणी स्त्री को ही बनाया जाता है। पीड़ित दोषी बनती है और पुरुष विजय का उल्लास मनाता है। चर्चित उपन्यास में सुखदेव तिवारी के घर में नशे में धुत कुछ सिपाही घुसकर उसके बहू के साथ बलात्कार की अपचेष्टा करते है। बहू भयभीत

Type here to search 12°C Clear ENG 17:49 21-12-2022

होकर अपने बचाव के लिए रोने चिल्लाने लगती है तो सुखदेव उसका जबड़ा दबाते हुए कहता है - "जोर से मत रो-धो, हल्ला से अपनी बदनामी होगी"।[i] इस तरह के अनेक घटनाएँ हमारे आस-पास आए दिन घटित होती रहती है। लोकलाज के भय से ऐसे घटनाओं को दबाया जाता है जो अपराधियों के मंसूबा को बढ़ावा देता है। यदि केस फाइल कर भी दिया जाए तो समाज का कड़वाहट, संदेह और हिकारत भरी दृष्टि, मीडिया का टी.आर.पी स्टंट, वकीलों के शर्मनाक टिप्पणियाँ और चरित्र पर उठाए सवाल पीड़ित को अकल्पनीय यातना देती है। "भारत जैसे देश में क्या मेडिकल जाँच, पुलिस तहकीकात और सुनवाई के दौरान जख्मों पर नमक छिड़कने जैसे बेहूदा, अप्रासंगिक, तर्कहीन व बेतुके सवाल क्या और विद्रूपता अख्तियार नहीं कर लेंगे?...उसे पहले अपने सच्चरित्र होने का प्रमाण पेश करना पड़ता है, जहां विरोधी पक्ष के वकील उसके पिछले सम्बन्धों तथा पूर्व घटनाओं का सहारा लेकर उसे चरित्रहीन कुलटा बताने के प्रयास में लगे होते हैं लेकिन न्याय की इस लंबी प्रक्रिया में उसे भीड़ के बीच कितनी ही बार उघाड़ा जाता है"।[ii]

एक चीनी कहावत है- "पुरुष को शिक्षित करो तो एक जन विकसित होता है पर स्त्री को शिक्षित करो तो पूरा वंश शिक्षित होता है। इसे हम इस तरह भी कह सकते हैं कि स्त्री को सही तरह मुक्ति दो तो पूरा वंश मुक्त होता है"।[iii] चर्चित उपन्यास में सुनन्दा का आत्मजागरण समूचे गाँव के उद्धार का कारण बनता है। सुखदा के लगातार प्रोत्साहन से ही बेनीमाधो तिवारी ब्राह्मणवादी संस्कारों को जो उन्हें मनोविकार के हद तक कुंठित कर चुका था, को त्यागने में सफल होते हैं। सुनन्दा का नेतृत्व गाँव की स्त्रियों का मनोबल बढ़ाता है। सदियों से जकड़ी हुई पुरुषसत्ता की जंजीर को तोड़कर वह पुरुषनिर्मित अनीतिपूर्ण व्यवस्था के विरुद्ध मुखर होती है।

चर्चित उपन्यास में पुरुषवादी संस्कारों में दीक्षित लोगों के कुंठित विचार और स्त्री के प्रति शोषणकारी, भोगवादी मनोवृत्ति को उपन्यासकार ने कई प्रसंगों में पाठक के समक्ष रखा है। पुरुषतांत्रिक समाज में ही प्रत्येक स्त्री का जन्म और पोषण होता है। बचपन से ही उसे पुरुषस्वीकृत व्यवहार करने की सीख दी जाती है। स्त्री मानस का अनुकूलन कुछ इस प्रकार होता है कि स्त्री विरोधी नियमों को ही वह परम सत्य मान बैठती है और दुर्भाग्यवशतः जाने-अनजाने स्त्री शोषण की सह-अपराधिनी भी बनती है। उपन्यास में बेनीमाधो की भौजी भी इस नाते गुनेहगार ठहरती है। वह सुनन्दा को पुरुषनिर्मित मूल्यों की पालन की हिदायत देती है - "ध्यान रहे बहू कि पाँव कहीं ऊँच-नीच नहीं फिसले। बड़े हिसाब से पाँव रोपना। खतरा तब बढ़ता है जब विधि-विधान लाँघकर औरत पुरुष की बराबरी करने लगती है। अपनी जाति-बिरादरी में विधवा की दूसरी शादी वर्जित है"।[iv]

स्त्रीत्व का एक निश्चित ढाँचा बनाकर प्रत्येक स्त्री को उस कसौटी में खड़ा करना अन्यायपूर्ण है। चर्चित उपन्यास के पात्र इन दकियानूसी नियमों का अतिक्रमण करते हुए सत्ता की छद्म के विरुद्ध लड़ती हैं और अस्मिता रक्षा तथा स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए निरंतर संघर्षरत हैं। स्त्री के व्यक्तित्व के विकास को अवरोध करती पुराने संकीर्ण गलियों को त्याग वह अपने नए सफर पर चल पड़ती है जिसका रास्ता भी वह खुद चुनती है और मंजिल भी। वह वस्तु से व्यक्ति बनने की उसकी उत्कट चाह में वह सारे जोखिमों को, समाज के ताने, अपनों की अवज्ञा और विश्वासघात सब कुछ झेल लेती है लेकिन हौसला नहीं खोती। उपन्यासकार ने चर्चित उपन्यास में सामाजिक समता की कामना करते हुए स्त्री जागरण को जन-जागरण और जन-आंदोलन का माध्यम बनाया है।

संदर्भ :

i) राजेंद्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, पृ 16
ii) मधुकर सिंह, बेनीमाधो तिवारी की पतोह, पृ 14-15
iii) वही, पृ 14
iv) वही, पृ 24
v) वही पृ. 40
vi) वही, 40
vii) वही, पृ 41
viii) वही 41
ix) वही, पृ 74
x) कमलेश कटारिया, नारी जीवन : वैदिक काल से आज तक, पृ 70
xi) मृणाल पाण्डेय, स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, पृ 10
xii) मधुकर सिंह, बेनीमाधो तिवारी की पतोह, पृ 44

सहायक ग्रंथ सूची

1) कमलेश कटारिया, नारी जीवन : वैदिक काल से आज तक, निकिता प्रकाशन गृह, जयपुर 2013
2) नमिता सिंह, स्त्री प्रश्न, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017
3) पुष्पपाल सिंह, 21वीं शती का हिन्दी उपन्यास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016
4) मधुकर सिंह, बेनीमाधो तिवारी की पतोह, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2016
5) मृणाल पाण्डेय, स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008